Chap-1

प्रथम अध्याय

हिन्दी कहानी साहित्य की विकास परम्परा

(साठोत्तर कहानी विषय वस्तु और शिल्प)

प्रकृति का प्रत्येक पदार्थ अपने चारों ओर के वातावरण के अनुरूप अनेक चित्रों का सृजन करता है। चंचल समीर जल-राशि पर न जाने कितने चित्र अंकित करता है। सूर्य की किरणें जल-थल पर अपना शीतोष्ण प्रभाव उत्पन्न करने के साथ-साथ विभिन्न रंगों का सन्निवेश भी करती हैं। मानव इसका अपवाद नहीं है। उस पर बाह्य सृष्टि की विविध वस्तुओं की प्रतिच्छाया पड़ती है जो उसके मस्तिष्क पर अमिट छाप छोड़ती है। फलस्वरूप मानव का हृदय आंदोलित हो जाता है और वह अपने हृदय की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए उत्सुक हो उठता है। अनुभूतियाँ ही रचनाशील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन जाती हैं।[1] क्षण-विशेष में जब सृजन शक्ति प्रबलता के साथ गतिशील हो जाती है, तब सत्य, अन्तर्मन की चेतना से नया रूपाकार ग्रहण करता है। ऐसी भावप्रवण स्थिति को प्राप्त करके सर्जक की प्रतिभा अभिव्यक्ति पथ का स्वयं सन्धान कर लेती है। इसके परिणामस्वरूप उसका सृजन या मौलिक साहित्य-चिन्तन केवल सामयिक मूल्य न रह कर मानवता को नवीन दिशा की ओर इंगित करता तथा चिरस्थायित्व को प्राप्त करता है। हृदय पर पड़ने वाले इन प्रभावों को व्यक्त करने के लिए अनेक माध्यमों में से एक माध्यम कथा-साहित्य है, जिनमें कहानियों का समावेश है। अपने अनुभवों को दूसरे के समक्ष व्यक्त करने से व्यक्ति को एक ओर आत्मसुख मिलता है तो दूसरी ओर श्रोता या पाठक का भी रंजन होता है। इसी कारण कहानियों में जिज्ञासा तथा रोचकता की सर्वविश्रुत क्षमता रहती है। शनैः शनैः आदिम मानव ने परस्पर मिल-जुल कर अपने जीवन को उन्नत व सुविधापूर्ण बनाने का प्रयत्न किया। इस प्रकार प्रारम्भ से ही मनुष्य के सामाजिक विकास की अभिवृद्धि के साथ-साथ कहानी का विकास भी होता रहा।

जब हम कहानियाँ पढ़ते हैं तब अनुभव होता है कि प्रत्येक कहानी में

जीवन के किसी मार्मिक पक्ष या मानव स्वभाव के किसी विलक्षण पक्ष का चित्रण होता है, क्योंकि लेखक बाह्य जगत से विकसित अनुभूतियों को ही अभिव्यक्त करता है। अत: यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक कहानी की अपनी निजी संवेदना होती है। कथावस्तु की परिधि अत्यन्त विस्तृत है। किसी कहानी में जीवन में घटने वाली घटनाएँ इतनी प्रभावपूर्ण होती हैं कि वे भावुक हृदय के लिए प्रभावशाली होती हैं, तथा कुछ कहानियाँ पूर्णरूपेण काल्पनिक होती हैं जिनमें लेखक अपनी कल्पनाओं में डूब कर मर्मस्पर्शी कहानियों की रचना करता है। ये कल्पनाएँ भी जीवन और जगत की भूमि की ही देन होती हैं। इस प्रकार कहानियों में वर्णित घटनाओं के माध्यम से व्यक्ति को निजी चेतना से जाने- अनजाने अनुप्राणित करना सुविधाजनक होता है। अत: प्रारंभ में मानवीय जीवन के उदात्तीकरण के लिए उपदेशात्मक आदर्शवादी तथा उद्देश्यपूर्ण कहानियों का सृजन होने लगा, नैतिक तथा सामाजिक आदर्शों के अनुरूप कहानी के तत्वों का ढाँचा बनने लगा। आगे चलकर विकास की यह गति जटिल व द्रुतगामी होती चली गयी। यह ध्यातव्य है कि कहानी में अन्य विधाओं की अपेक्षाकृत जीवन को प्रत्यक्ष रूप में अभिव्यक्त करने की असीम क्षमता होती है। इसी कारण वैषम्य से आक्रान्त और विश्रृंखलता से क्षुब्ध आधुनिक युग में अभिव्यक्ति के अन्य माध्यमों की तुलना में कहानी अधिक सशक्त माध्यम बन चुकी है।

पूर्व-पीठिका :

आदिम अवस्था में प्राकृतिक शक्तियों से एकाकी संघर्ष करने वाला मनुष्य धीरे-धीरे संगठित जीवन की ओर आगे बढ़ा। कालान्तर में आर्थिक, प्रजातिगत तथा इतर कारणों से सामाजिक वर्ग बने और आज पुरानी व्यवस्था या समाज-संगठन में पूरा- पूरा बदलाव आ चुका है। आज अर्थ- व्यवस्था पर

~~समाज- संगठन में पूरा- पूरा बदलाव आ चुका है। आज अर्थ- व्यवस्था पर~~
आधारित अनेक वर्ग बन गये हैं। समाज की चेतना पहले से नितान्त भिन्न है। परिणाम स्वरूप समाज में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगे। इन सामाजिक परिवर्तनों का प्रत्यक्ष प्रभाव कहानी पर भी पड़ा। अत: जहाँ प्रारंभ में कहानी केवल राजा और रानी की कथा बन कर रह जाती थी, वहाँ सामन्ती प्रथा जमींदार और साहूकार आदि की कहानियाँ भी लिखी जाने लगीं। शनै: शनै: कहानी वायवीपन की अपेक्षाकृत यथार्थपरक, सूक्ष्म और संश्लिष्ट होती गयी। गद्य के विकास के अनुरूप कहानी की अभिव्यक्ति के भी अनेक ढंग अपनाये जाने लगे जिसमें घटना, जिज्ञासा, मनोरंजन अथवा किसी भी संवेदना से कहानी का आरंभ होने लगा, जो समाज की असंगतियों-असमानताओं, पाखंडों -आडम्बरों, समस्याओं, सत-असत आचरणों, विद्रूपताओं तथा प्रकृत व्यवहारों की विवृत्ति करने के साथ जीवन की नवीन सम्भावनाओं और उद्देश्यों से भी अनुप्राणित होती है। कहानी मानव के वास्तविक जीवन की सटीक व्याख्या व उसकी सहयोगिनी भी है। कथा सम्राट प्रेमचन्द के अनुसार मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित स्वस्थ आदर्श वाली उदात्त कहानियाँ ही सर्वोत्तम कोटि में आती हैं।[2] वर्तमान स्थिति तक आने में हिन्दी कहानी को जो अनेक पड़ाव पार करने पड़े हैं उनकी संक्षिप्त चर्चा यहाँ कर लेना आवश्यक है।

भारतीय कहानी का आदिम स्वरूप ऋग्वेद से माना जाता है, क्योंकि ऋग्वेद में यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी आदि की कथाओं का वर्णन मिलता है। तदुपरान्त महाभारत भी एक ऐसी पूर्ण कथा है जिसमें अनेक छोटी-छोटी कहानियाँ माला के मनकों की भाँति ~~श~~ सुशोभित हैं। इसी समय में नहुष,

गंगावतरण, नलदमयन्ती आदि कहानियाँ भी मिलती हैं जिन्हें हम आधुनिक कहानी की प्रेरक कहानी मान सकते हैं। उस युग की कहानी एक विशेष - नीतिपरक परम्परा को लेकर चलती थी, जिसके पात्र मनुष्य के अतिरिक्त पशु-पक्षी, वृक्ष आदि भी होते थे। नीति कथाओं का मुख्य उद्देश्य राजनीति, धर्म आदि का सीधे ढंग से उपदेश देना ही होता था, जिसका प्रमुख प्रतिनिधि संग्रह 'पंचतन्त्र' है। पंचतन्त्र के पाँच तन्त्र मित्रभेद, मित्रलाभ, विग्रह, लब्ध, प्रणाश तथा अपरिक्षित कारक होते थे। मध्य युग के आरंभ में जहाँ प्रेम कथाओं का बीजारोपण हुआ, वहाँ नैतिकता के अतिरिक्त प्रणय कथाओं का समन्वय अधिक मिलता है, जिसके कारण लैला- मजनू, शीरी-फरहाद, युसूफ-जुलेखा आदि कथाएँ भी बनीं। दूसरी ओर सूफी प्रेम की प्रणय कथाएँ, अस्वाभाविक, अलौकिकता को लेकर बनीं। इस प्रकार से समाज में परिवर्तनों के फलस्वरूप कहानी की यह परंपरा आधुनिक काल तक निर्बाध रूप से अग्रसर होती रही।

यह उल्लेखनीय है कि कहानी को साहित्य की एक विधा के रूप में सर्वप्रथम यूरोपीय देशों में स्वीकार किया गया, तत्पश्चात् भारत का नाम आता है। यूरोपीय देशों में लिखी गयी कहानियाँ 18 वीं, 19 वीं शताब्दी की हैं इनमें ओ हेनरी (अमरीकी, मोपासा (फ्रेन्च), चेखव (रसियन) आदि का नाम उल्लेखनीय है। इस प्रकार विधा के रूप में कहानी सर्वथा आधुनिक युग की देन है, कथा कहने की प्रवृत्ति मात्र को परंपरा से जोड़ा जा सकता है।

हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी :

हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी के सन्दर्भ में साहित्यकार भिन्नमत

रखते हैं। लल्लू लाल जी, सदल मिश्र तथा इंशा अल्ला खाँ ने अपने- अपने गद्य संग्रहों में ऐसी अनेक रचनाएँ दीं। डॉ0 देवेश ठाकुर ने इन्हें कालक्रमानुसार रखने का प्रयत्न किया है। 'रानी केतकी की कहानी' (इंशा अल्ला खाँ 1803), 'राजा भोज का सपना' (शिवप्रसाद सितारे हिन्द- 1888), 'इन्दुमती' (किशोरी लाल गोस्वामी 1900), 'एक टोकरी भर मिट्टी' (माधव राव सप्रे 1901), 'प्लेग की चुड़ैल' (भगवान दास 1902), 'ग्यारह वर्ष का समय' (रामचन्द्र शुक्ल 1903), 'दुलाई वाली' (बंग महिला 1907)[3] कुछ लोगों ने पं0 गौरी दत्त की 'देवरानी जेठानी' (1870) रचना को प्रथम मौलिक कहानी माना है। परन्तु इसे तथा इंशा अल्ला खाँ की गद्य रचना को केवल नाम मात्र से ही कहानी मान लेना उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि कहानी में यथार्थ के प्रति आग्रह का होना आवश्यक है। इसमें 'क्षण का यथार्थ' या 'यथार्थ का क्षण' अधिक महत्वपूर्ण होता है। 'रानी केतकी की कहानी' में यथार्थ के प्रति आग्रह का पूर्ण अभाव है। डॉ0 गोपाल राय के अनुसार इसे केवल मौलिक गद्य कथा का नाम ही दिया जा सकता है।[4] इसी प्रकार 'राजा भोज का सपना' भी कहानी नहीं मानी जा सकती। इसमें अधिकांशत: भावुकता, कौतूहल तथा उपदेशात्मकता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं जिस पर बंगला तथा अंग्रेजी की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है तथा साहित्य में यथार्थ का पथ प्रशस्त करने की क्षमता का अभाव है। आचार्य शुक्ल हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी किशोरी लाल गोस्वामी कृत 'इन्दुमती' को मानते हैं।[5] यह भावना -प्रधान कहानी है, जो किशोरावस्था के कौमार्य का रागात्मक सम्बंध कलात्मक रूप से प्रस्तुत करने के साथ ही उस युग की भावात्मक स्थितियों को भी चित्रित करती है लेकिन अधिकांश आलोचकों ने इसे टेम्पेस्ट(बंगला कहानी और अंग्रेजी नाटक की छाया) माना है, जिसे लक्ष्य करके डॉ0 लक्ष्मीनारायण लाल ने आचार्य शुक्ल कृत

'ग्यारह वर्ष का समय' कहानी को प्रथम मौलिक कहानी माना है।[6] श्री राजेन्द्र यादव हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' (1913) कहानी को मानते हैं।[7] दूसरी ओर कालक्रम तथा यथार्थता की दृष्टि से विचार करते हुए डॉ० देवेश ठाकुर ने 1901 में 'छत्तीसगढ़ मित्र' पत्रिका में प्रकाशित माधवराव सप्रे कृत 'एक टोकरी भर मिट्टी' कहानी को हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी स्वीकार किया है।[8] इस कहानी में एक जमींदार की स्वार्थ लिप्सा से एक गरीब विधवा लिपटी हुई है जो अन्त में जमींदार का हृदय-परिवर्तन कर उन्हें अपने किये पर पश्चाताप करने पर विवश कर देती है। इसी प्रकार की घटनाओं के कारण यह आधुनिक कहानी की पहचान की प्रथम कहानी कही जा सकती है। तदुपरान्त 'दुलाई वाली' का नाम आता है जिसकी चेतना दैनिक जीवन के यथार्थ के स्तर पर कुछ रूप में जुड़ी हुई है। 'मन की चंचलता' (माधव प्रसाद मिश्र 1901), 'गुलबदन' (किशोरीलाल गोस्वामी 1902), पंडित और पंडितानी' (गिरिजादत्त बाजपेयी) 1903), 'राखी बंद भाई' (वृन्दावनलाल वर्मा 1909), 'ग्राम' (1911), 'चन्दा' (1911), 'मदन मृणालिनी' (1912), 'रसिया बालम' (1912), 'तानसेन' (1912) (जयशंकर प्रसाद), 'परदेशी' (विशम्भरनाथ जिज्जा, 1912), 'कानों में कंगना' (राधिका रमण प्रसाद सिंह 1913), आदि कहानियों का नाम भी उल्लेखनीय है।

विकासयात्रा :

कहानी की विकास यात्रा में प्रेमचन्द और उनके युग का सर्वाधिक महत्त्व है। प्रेमचन्द की पहली हिन्दी कहानी 'सौत' मानी जाती है। इसके बाद 'सज्जनता का दंड' (1916) तथा पंचपरमेश्वर' कहानी (अक्टूबर 1916) सरस्वती

पत्रिका में प्रकाशित हुई। यद्यपि प्रेमचन्द ने इससे पहले भी कहानियाँ लिखी हैं पर ये कहानियाँ उर्दू में हैं वे हिन्दी में बाद में आये। इसके अतिरिक्त इस युग की कहानियों में जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' (1911), राधिका रमण सिंह की 'कानों में कंगना' (1913), विश्म्भर शर्मा कौशिक कृत 'रक्षा बन्धन' (1913) तथा चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' (1913) का भी स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। 'कानों में कंगना' कहानी काव्यात्मक स्फीति के चरित्र सुधार के बिन्दु तक पहुँचती है लेकिन 'उसने कहा था' हिन्दी की एक ऐसी प्रथम कहानी है, जिसमें यथार्थ की टकराहट तथा आदर्श-बोध की प्रवृत्ति की बेल, एक उपलब्धि के रूप में दृष्टिगोचर होती है। प्रेमचन्द की कहानियाँ अधिकांशत: चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' कहानी की प्रवृत्ति की ही प्रतीत होती हैं।[9] यह उल्लेखनीय है कि प्रेमचन्द के आदर्श की परिकल्पना प्रेमचन्द पूर्व युगीन आदर्शों का ही एक विकसित स्पष्ट रूप है जो पूर्ववर्ती युग की रचनात्मक धारा है। इसका समर्थन प्रेमचन्द की 'आत्माराम', 'नमक का दरोगा', 'शान्ति', 'सुजान भगत', 'ईदगाह' इत्यादि कहानियों में मिलता है। प्रेमचन्द के रचनात्मक विकास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 'पंच परमेश्वर' से 'कफन' तक की कहानी यात्रा में युगीन परिवर्तन को ही प्रमुखता दी गयी है। जो जागरूक वर्तमान में एक अतीत की चेतना मात्र है, तथा कहानी को नये मोड़ की ओर संकेत करती है।[10] इनकी कुछ कहानियों के कथानक ऐतिहासिक हैं तो दूसरी ओर कुछ कहानियाँ नारी की दयनीय दशा का बोध कराती हैं। इनमें 'दहेज', 'वेश्या', 'दूध का दाम', 'सद्गति', 'सफेद खून' तथा 'मन्दिर' आदि का नाम उल्लेखनीय है। कुछ कहानियाँ अस्पृश्यता, संयुक्त परिवार का वैषम्य, वृद्ध-विवाह, बाल-विवाह तथा वैधव्य आदि से सम्बंधित पूर्ण योजना में सन्निहित है, तथा कुछ के माध्यम से रूढ़िबद्धता तथा अंध-विश्वासों

पर सीधा प्रहार किया गया है। इसके उदाहरण रूप में 'निर्वासन', 'नरक का मार्ग', 'धिक्कार', 'शंखनाद', 'सज्जनता का दंड' आदि को लिया जा सकता है। आगे चलकर इन्होंने आदर्शवाद में यथार्थवाद को परस्पर समन्वित करने का प्रयास किया जिसका ज्वलन्त उदाहरण 'प्रेमतीर्थ', 'पंचप्रसून', 'प्रेम-चतुर्थी' तथा 'प्रेमपीयूष' आदि कहानियों में मिलता है।

उन्हीं दिनों जयशंकर प्रसाद की कहानियाँ सामने आयीं, जो मस्तिष्क को एक संवेदनात्मक तनाव की अनुभूति देती हैं। इनकी शैली में मनुष्य के आन्तरिक संवेगों तथा भावनाओं का सूक्ष्म शैली में मार्मिक वर्णन मिलता है। इनकी 'आकाशदीप', 'पुरस्कार', 'मधुआ', 'गुंडा' आदि विशिष्ट कहानियों में तत्कालीन युग की परिस्थितियों के भी दर्शन होते हैं। प्रसाद की अभि-व्यक्ति यथार्थ के साथ-साथ छायावादी सौन्दर्य भावना तथा अलंकारिक शैली से पूर्ण है। 'छाया', 'प्रतिध्वनि' संग्रहों में उनकी प्रारंभिक कहानियाँ हैं जिनमें उनका छायावादी कवि अधिक उभरा है। कहीं-कहीं ऐतिहासिकता भी अछूती नहीं है। इन कहानियों में नारी ही नियामिका रूप से उतरी है जिससे पुरुष का रूप गौण हो गया है। 'चन्दा', 'ग्राम,' 'रसियाबालम' आदि कहानियों में प्रणय तथा यौवन की सौन्दर्यमयी कोमल भावनाओं का मार्मिक चित्रण है। उनके आगामी विकास के चरण की कहानियाँ 'आकाशदीप' संग्रह में संकलित हैं। ये स्थूल के स्थान पर सूक्ष्म की अनुभूति से प्रभावित हैं। 'आकाश-दीप', 'ममता', 'बिसाती', 'स्वर्ग के खंडहर' कहानियों में यही मार्मिकता अधिक है। 'पुरस्कार', 'आँधी', 'इन्द्रजाल', 'नूरी', 'गुंडा', 'देवरथ', 'सालवती', 'घीसू', 'मधुआ' प्रौढ़ कहानियाँ हैं, जिनमें नाटकीयता के स्थान पर मनोवैज्ञानिकता

तथा स्त्री- पुरुष की उदात्त मानवीयता विद्यमान है। प्रेमचन्द तथा प्रसाद की कहानियाँ एक दूसरे के समानान्तर चलने पर भी प्रेमचन्द की कहानियाँ ही समकालीन जीवन के सघन यथार्थ जगत की अधिक महत्वपूर्ण व आदर्शवादी परंपरा को लेकर भी यथार्थोन्मुख प्रवृत्ति की बनी हैं।

प्रेमचन्द की भाँति उर्दू से हिन्दी में आने वाले इस युग के कथाकारों में सुदर्शन का नाम उल्लेखनीय है। इनका प्रथम कहानी संग्रह 'पुष्पलता' (1919) में प्रकाशित हुआ इन्होंने अनेक कवि-कलाकार के जीवन तथा उनकी मनोवृत्तियों को उजागर करने वाली कहानियाँ लिखी हैं। 'काव्य कल्पना', 'कवि का चुनाव', 'कवि', 'अमर-जीवन', 'चित्रकार', 'आपबीती', इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इनकी कहानियों में प्राय: सामाजिक दृष्टि के प्रति विशेष आग्रह नहीं है।

तत्पश्चात् विशम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' का स्थान है, जिनके दो कहानी संग्रह 'कलामन्दिर' और 'चित्रशाला' अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इस कहानी यात्रा के विकास को आगे बढ़ाते हुए अज्ञेय, जैनेन्द्र, इलाचन्द जोशी, भगवती-चरण वर्मा आदि लेखक अपने रचनात्मक संसार में नये रचनाबोध को प्रस्तुत करते हैं। इनमें से एक ओर यशपाल ने प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ को और भी अधिक उभारा है, तो दूसरी ओर जैनेन्द्र ने सामाजिकता के स्थान पर व्यक्तिमन की अनन्तता को अपनाया है। यशपाल का अन्तिम बिन्दु अनुभूति प्रेरित न होकर केवल एक विचार मात्र होता है। यही कारण है कि पाठक खुलने वाले रहस्य की लालसा से ही कथा का सूत्र दृढ़ता से पकड़े रहता है जबकि कहानी में अंतिम बिन्दु आदर्श न होकर एक तीखा व्यंग्य होता है। यशपाल ने सामाजिक चेतना को उग्र रूप दिया। इन्होंने सर्वहारा चेतना का स्वरूप तथा दमित कामवासना

के साथ-साथ मार्क्सवादी विचार धारा को भी कहानी में स्थान दिया । ये साहित्य के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व को भी स्वीकार करते हैं, जिससे उनकी कहानियों में अनुभूतिगम्य आत्मीयता को प्रधानता मिली है । इनकी 'उत्तमी की माँ', 'चित्र का शीर्षक', 'पिंजरे की उड़ान', 'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुन्दर हूँ' आदि कहानियाँ मार्क्सवादी विचारधारा से ओतप्रोत हैं। यशपाल ने सुनिश्चित विचारधारा और जीवनदर्शन पर कहानियाँ लिखकर गाँधीवाद का भी खंडन किया, जो 'गाँधीवाद की शवपरीक्षा' में स्पष्ट है। यशपाल की विचारधारा मार्क्सवादी होने के कारण उनकी दृष्टि में मनोविश्लेषण स्वप्न या सेक्स सिद्धान्त की विचारधारा की एक प्रक्रिया मात्र है । इन्होंने समाज के परम्परागत मूल्यों तथा रीति-रिवाजों पर भी तीक्ष्ण व्यंग्य प्रधान कहानियाँ लिखी हैं । इस दृष्टि से 'साग' कहानी उत्कृष्ट कही जा सकती है । 'मनु की लगाम', 'धर्मरक्षा', 'ज्ञानदान', 'प्रतिष्ठा का बोझ' आदि कहानियाँ धर्म तथा प्राचीन नैतिक मान्यताओं की कटु आलोचनात्मक कहानियाँ हैं । ये किसी विचार को संघर्ष और द्वन्द्व के परिवेश में लेकर चरम-सीमा तक पहुँचा कर उस समस्या के हल को ध्वनित कर देते हैं । उनकी कहानियाँ सोद्देश्यता तथा वांछनीय प्रभाव की दृष्टि से भी उल्लेखनीय हैं । इन विशेषताओं के कारण ये वर्ष 1940-50 के मध्य उत्कृष्ट प्रभावशाली कहानीकार माने गये । इसके अतिरिक्त मानवता के शाश्वत मूल्यों और जीवन के अनवरत सम्बंध और भावनाओं की नैतिकता-अनैतिकता को विभाजित करने का कार्य भी यशपाल ने अपनी कहानियों में किया ।

प्रगतिवादी चिन्तन-मनन के अनुरूप कहानी लिखने वालों में भैरवप्रसाद गुप्त उपेन्द्रनाथ अश्क, रांगेय राघव, नागार्जुन तथा अमृतलाल नागर के नाम आते हैं।

दूसरी ओर यशपाल के समानान्तर ही जैनेन्द्र ने कहानी को चेतना तथा संरचना दोनों रूपों में एक नया मोड़ दिया । इन्होंने वर्ग- पात्रों के स्थान पर व्यक्ति तगत पात्रों का चित्रण करने का सफल प्रयास किया जिससे व्यक्ति त के आंतरिक आवेग-संवेगों को सशक्त अभिव्यक्ति मिल सकी । जैनेन्द्र की कहानियाँ अत्यन्त सहज तथा उन्मुक्त प्रकृति की हैं । इनमें प्रतिबद्धता का नितान्त अभाव है । उनका नायक पात्र 'व्यक्ति' है जो 'मैं' की अत्यन्त छोटी, सहज, महत्वहीन लगने वाली समस्याओं को अपनत्वभरी शैली से उभारता है । उनकी - कहानियाँ दार्शनिक मुद्रा धारण करके मन: स्थिति को प्रदर्शित करती हैं । इनकी कहानियों में नाटकीयपन, संयोगवादिता के अतिरिक्त कथानक की सूक्ष्मता, सांकेतिकता तथा भीतरी संघर्ष का सहज शैली में विश्लेषण है । अत: जैनेन्द्र के कथाशिल्प की उपर्युक्त विशेषताओं के कारण हिन्दी कहानी में एक नया मोड़ आया है । इनकी दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक कहानियाँ आख्यानों तथा पौराणिक ऐतिहासिक कथानक से सम्बंधित हैं जैसे- 'नारद का अर्घ्य', 'उर्ध्वबाहु', 'जयसन्धि', 'बैरागी', 'महाभारत', 'नीलम देश की राजकन्या', तथा 'तत्सत्' आदि । 'राजीव की भाभी', 'एक रात', 'जाह्नवी', 'क्या हो', 'मित्र विद्याधर', 'एक टाइप', 'एक कैदी' आदि मनोवैज्ञानिक रूप से उत्कृष्ट हैं । जैनेन्द्र शिल्प के धनी कुशल कहानीकार हैं । यही कारण है कि इनकी कहानियाँ आत्मकथा, पत्रात्मक, संवाद, नाटक, स्वगत कथन तथा कथात्मकता सभी रूपों में मिलती हैं । द्वितीयत: यह उल्लेखनीय है कि सामाजिक परिवेश के चित्रण पर इनका विशेष आग्रह नहीं है ।

ऐसे समय में अज्ञेय ने विशिष्ट व्यक्ति की स्थापना करके अपना रचनात्मक संसार प्रस्तुत किया । अज्ञेय का नायक अपनी विशिष्ट अनुभूतियों को लेकर संघर्ष में उतरता है, जबकि जैनेन्द्र का व्यक्ति त सहज अनुभवों में ही दूसरों को भी आमंन्त्रित करता हुआ अभिभूत होता है । उन्हीं दिनों मनोविज्ञान में अपना

कीर्तिमान स्थापित करने वाले सिग्मंड फ्रायड ने भी मनोविश्लेषणात्मक पद्धति की किरणें संपूर्ण विश्व में विकीर्ण कीं, जिससे व्यक्ति की अन्त-र्निहित शक्तियों का उद्घाटन हुआ तथा मनुष्य सामूहिक चेतना के माध्यम से अभिव्यक्त होने लगा। इस प्रकार मनोवृत्तियों के आधार पर निम्न वर्ग के पात्रों को भी सफल सामाजिक व्यक्ति का स्थान प्राप्त होने लगा। फ्रायड की इस विचारधारा का प्रभाव जैनेन्द्र, अज्ञेय तथा इलाचन्द जोशी पर अधिक पड़ा। अत: इस नवीन अन्तर्दृष्टि, संवेदनशीलता तथा मनोविश्लेषण प्रधान दार्शनिक गहराई मिलने के कारण हिन्दी कहानी का बौद्धिक स्तर ऊँचा होता गया। व्यक्तिनिष्ठ चिन्तन का स्पष्ट प्रभाव अज्ञेय की 'गैंग्रीन' (रोज), 'हीलीबोन की बत्तखें', 'शरणार्थी', 'मेजर चौधरी की वापसी' आदि कहानियों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। जैनेन्द्र की भाँति इनकी कहानियाँ भी वस्तुथा इतिवृत्तात्मकता में क्षीण ही रहती हैं, किन्तु छोटी-छोटी घट-नाओं की क्रिया-प्रतिक्रिया मानसिक घातों-प्रतिघातों को अभिव्यक्त करने में अपना अद्वितीय स्थान रखती हैं। प्रतीकात्मक कहानियों में 'नम्बर दस', 'साँप', 'कोठरी की बात', 'पुलिस की सीटी' तथा 'सिगनेलर' के नाम उल्ले-खनीय हैं। इनकी रचना विद्रोह की पृष्ठभूमि पर की गयी है। अज्ञेय की भाषा परिमार्जित, पुष्ट तथा प्रवाहपूर्ण है जिसमें आश्चर्यजनक संयम, गंभीरता अमूर्त उद्गारों, घात-प्रतिघातों, और मानसिक द्वन्द्वों की अभिव्यक्ति को सदैव सफलता मिली है।[11] इस प्रकार हम देखते हैं कि अज्ञेय प्रतीक प्रयोगों तथा विश्लेषणों द्वारा कहानी को संश्लिष्ट रूप देकर जटिल बना देते हैं, जबकि जैनेन्द्र अपनी विचारधारा को घटनाओं का रूप देकर संश्लिष्टता के स्थान पर विस्थापन करके फैला देना चाहते हैं।

उपरिनिर्दिष्ट अज्ञेय तथा जैनेन्द्र के मध्यवर्ती कहानीकार इलाचन्द जोशी

हैं जो कभी फ्रायड की विचारधारा से अभिभूत होकर पात्र से गहन, गम्भीर आत्ममंथन कराते हैं तो कभी मानसिक ग्रंथियों के अनुरूप घटनाओं का संयोजन करते हैं। इसी कारण जोशी की कहानियाँ सामाजिक तथा वैयक्तिक चेतना, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की आधार भूमि को लेकर प्रस्तुत हुई हैं। नारी पात्रों की वैयक्तिकता उन्मुक्त रूप से इसी युग में सामने आती है।

प्रेमचन्द युग की कहानियों में नारी पीड़ित, शोषित, हतभाग्या, दयनीय अथवा कुलवधू या देवी के रूप में उपस्थित होती थी किन्तु अब वह इनके ऊपरी आरोपण से मुक्त होकर निजी आशा-आकांक्षाओं, शक्ति तथा दुर्बलताओं से संयुक्त होकर पारिवारिक सीमा से निकल कर व्यापक समाज के मध्य उन्मुक्त विचरण करती है, जिससे उसकी दयनीय दशा के पूर्ववर्ती आयामों में भारी परिवर्तन आया है। पुरुष के साथ संपर्कों में भी अब वृद्धि हुई है। इन सबके कारण वह अन्तर्द्वन्द्व प्रधान होती जा रही है। जीवन का यह अन्तर परवर्ती काल की कहानियों में प्रत्यक्ष रूप से उभर कर आया है, और इसके कारण वह अपनी पूर्ववर्ती कला- चेतना से स्वतंत्र होकर नयी कहानी का अभिधान प्राप्त करती है। जैसा कि निम्नलिखित विवेचन से प्रकट है।

नयीकहानी :

सन् पचास के बाद की कहानियों में पुन: परिवर्तन के फलस्वरूप उनमें युगीन परिवेश-जन्य मोहभंग का आभास प्रतीत होने लगा जिससे उसमें चर्चित मानवीय मूल्यों का एक विकासात्मक मोड़ प्रकाश में आया तथा शिल्प की एक नयी चेतना के साथ सन् 1956 तक नयी कहानी का आरंभ होने लगा। यद्यपि कतिपय आलोचकों के अनुसार इसका प्रथम प्रयोग 1950 में प्रकाशित -

श्री शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'दादी माँ' में निर्दिष्ट किया गया[12] तथापि प्राय: आलोचकों ने नयी कहानी का विधिवत प्रवर्त्तन 1956 से ही माना है।[13] जैनेन्द्र 'नयी कहानी' में नये पन से असहमत हैं।[14] अश्क इन्हें 'मात्र फैशन' का नाम देते हैं।[15] डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय भी इसके 'नये' विशेषण को नहीं मानते।[16] वस्तुत: नयी कहानी का आरम्भ 1950 से माना जाता है।[17] इन्हीं दिनों कहानी पत्रिका अपने पुनर्प्रकाशित रूप में सामने आयी।[18] कहानी पत्रिका के नववर्षांक में 'नयी कहानी' की जो चर्चा उठी थी उससे इसके आरम्भ होने के काल के सन्दर्भ में सम्मेलनों में गंभीर वाद-विवाद हुआ।

वस्तुत: हिन्दी कहानी को इन दिनों नयी कहने की आवश्यकता अनुभव की गयी जिसका श्रेय कहानी पत्रिका के कृती सम्पादक भैरव प्रसाद गुप्त को जाता है। यही वाद-विवाद तथा कहानी का बदलाव सन् 1960 तक स्थिर हो जाता है। इसके भाषा शिल्प में अतिरिक्त प्रभाव पड़ जाता है। परम्परित मूल्यों के स्थान पर मूल्यान्वेषण के नये आयाम उभर कर आये हैं, जिसमें भोगे हुए जीवन की अभिव्यक्ति ही अधिक मिलती है तथा आरोपित नैतिकता से उन्मुक्त हुआ मानव वास्तविक परिवेश को अभिव्यक्ति देने में सफल हुआ। ग्राम जीवन की अभिव्यक्ति भी उन दिनों प्राय: मिलती है। धर्मवीर भारती की 'गुलकी बन्नो', मन्नू भंडारी की 'रानी माँ का चबूतरा', कमलेश्वर की 'देवा की माँ' मोहन राकेश की 'आद्रा' तथा विष्णु प्रभाकर की 'धरती अब भी घूम रही है' इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

इन्हीं दिनों मार्कण्डेय के चार कहानी संग्रह- 'पानफूल' (1954) ,

'महुए का पेड़' (1955), 'हंसा जाइ अकेला' (1957) और 'भूदान' (1958) ग्राम जीवन से विधिवत आलेखन के रूप में सामने आये। यही मार्कण्डेय आगे चलकर 1959-60 में नगर-बोध ओढ़ कर सो जाते हैं और पांचवें कहानी संग्रह 'माही' में पेचीदा आधुनिकता बोध व सेक्स की कहानियों का जोर रहता है। शिवप्रसाद सिंह के 'आर पार की माला' (1955), 'कर्मनाशा की हार' (1958) नामक संग्रह भी प्रकाश में आये। कमलेश्वर की कथा यात्रा का प्रथम दौर भी इन्हीं दिनों हुआ जिसमें 'राजा निरबंसिया' (1959) शीर्षक कहानी विशेष-रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यह कहानी एक प्रकार से परम्परागत तथा नवीन मूल्यों को जोड़ने वाली कड़ी मानी जा सकती है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि इन दिनों कहानी नयी कहानी में परिवर्तित होती गयी। 1950 से 1960 के मध्य देश के कोने-कोने में इस सन्दर्भ में व्यापक चर्चा- परिचर्चा तथा गोष्ठियाँ हुईं तथा नयी कहानी पर जितनी अधिक चर्चा-विचारणा हुई उतनी सम्भवतः किसी अन्य विषय पर नहीं। इसका कारण नया भाव-बोध, घटित घटनाओं को नये परिप्रेक्ष्य द्वारा देखना तथा नवीन शिल्प चेतना को माना जा सकता है। एक ओर यशपाल, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतलाल नागर, हंसराज रहबर, विष्णु प्रभाकर आदि कहानीकारों ने आर्थिक विषमता और सामाजिक संत्रास को अपनी कहानियों में रूपायित किया, तो दूसरी ओर मनोविश्लेषण के सहारे मनोभूमियों को देखने का प्रयत्न जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द जोशी, धर्मवीर भारती आदि कहानीकार करते रहे। साथ ही साथ मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, शिवानी, रजनी पनिकर आदि महिला कहानीकारों ने भी अपना विशेष योगदान दिया। इस प्रकार नई कहानी में अनुभूति की प्रामाणिकता को रचना प्रक्रिया का मूल अंश मानकर जीवन को उसकी समग्रता में

रूपायित किया जाने लगा ।[19] इस समय समाज तथा व्यक्ति को पूर्ण रूप से समझ कर कहानियों का सृजन होने लगा जो पाठक की मनोदशाओं तथा व्यवहार से पूर्णतया सम्बंधित है ।

पूर्ववर्ती पृष्ठों पर कहा जा चुका है कि इन्हीं दिनों कथा साहित्य के अन्तर्गत ग्रामीण जीवन के रीति-रिवाजों और संस्कारों के चित्रण को भी उभारा गया है, जिससे आंचलिक कहानियों का सृजन हुआ । क्षेत्र- विशेष पर घटित संपूर्ण घटनाओं के समावेश का पूर्ण निर्वाह फणीश्वरनाथ 'रेणु' की आंचलिक कहानी 'तीसरी कसम', 'उर्फ मारे गये गुलफाम', 'लाल पान की बेगम' तथा मार्कण्डेय की 'हंसा जाइ अकेला' में मिलता है । जहाँ एक ओर रेणु ने आंचलिकता को तथा मार्कण्डेय, शिवप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र ने ग्राम्य जीवन को रूपायित किया है वहाँ दूसरी ओर उषा प्रियंवदा, निर्मल वर्मा, विजय चौहान की कहानियों में अन्तर्राष्ट्रीयता भी अछूती नहीं है । निर्मल वर्मा ने पक्षियों की तरह उन्मुक्त विचरण की लालसा, भावस्थिति तथा व्यक्तिवादी धारणा को 'परिन्दे' कहानी में अभिव्यक्त किया । यह उल्लेखनीय है कि नयी कहानी के क्षेत्र में जहाँ एक ओर नगर संकुल ~~सभ्यता~~ कमलेश्वर, मोहन राकेश, कृष्ण बलदेव वैद, भीष्म साहनी, अमरकान्त, रमेश बक्षी, दूधनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, गिरिराजकिशोर, मन्नू भंडारी, हरिशंकर परसाई, शरद जोशी में आई है वहाँ दूसरी ओर आदिवासियों तथा पहाड़ी जीवन को शानी, राजेन्द्र अवस्थी, शैलेश मटियानी, शिवानी, पानूखोलिया ने चित्रित किया है।[20]

स्वातन्त्र्योत्तर काल के कहानीकारों ने स्वयं को तथा अपनी रचनाओं को दूसरे कहानीकारों से भिन्न करने की दृष्टि से समय-समय पर नयी कहानी,

साठोत्तर कहानी, सचेतन कहानी, अकहानी, लघु कहानी, समानान्तर कहानी जैसे अनेक आन्दोलन चलाये जिनमें से मुख्य आन्दोलनों पर यथाप्रसंग विचार किया जा रहा है।

नई कहानी आन्दोलन में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव तथा कमलेश्वर के नामों का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है, जिन्होंने अपनी रचनाओं को नवीन घोषित कर उसे व्यक्ति तथा उसके जीवन के यथार्थ से सम्बंधित किया। पुरानी कहानी में किसी विचार, भाव अथवा धारणा की कल्पना का समावेश रचना में अवश्य होता था। नयी कहानियों में भोगे हुए सत्य को यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया गया, जिससे मनुष्य के परिवेश से कहानी का सक्रिय और यथार्थ सम्बंध स्थापित होने लगा। मोहन राकेश के अनुसार- 'साहित्य में एक नये युग की शुरुआत तब तक नहीं होती जब तक कि उस युग की चेतना किन्हीं विश्वासों या अविश्वासों में परिणत नहीं होती। जब तक कुछ बने हुए विश्वास चेतना को अनुप्राणित नहीं करते हैं, तब तक पिछले ह्रासोन्मुख युग के बीतने की अवधि समाप्त नहीं होती। विभाजन के बाद के वर्षों में बीतने और आनेवाले दो युगों का निरन्तर संघर्ष दिखायी देता रहा है- एक ओर विश्वासों को जन्म देने वाली नई चेतना थी और दूसरी ओर चेतना को शासित करने वाले पुराने विश्वास।[21] युगीन चेतना के द्वन्द्व और नये विश्वासों से प्रेरित नयी चेतना के विकास की जो भूमिका मोहन राकेश ने दी है वह नई कहानी में ~~विषय~~ वस्तु के अपेक्षित परिवर्तन का संकेत करती है।

'नये बादल', 'गुनाह', 'बेलज्जत', 'मलबे का मालिक' (मोहन राकेश), 'अभिमन्यु की हत्या', 'खेल-खिलौने' (राजेन्द्र यादव), 'कस्बे का आदमी',

'गर्मियों के दिन', 'नीली झील' (कमलेश्वर) आदि कहानियों को उक्त तथ्य के उदाहरण रूप में रखा जा सकता है। इन कहानियों में मन: स्थितियों को विशेष रूप से चित्रित किया गया तथा स्त्री- पुरुषों के सम्बंधों को भी नवीन मोड़ दिया गया। पति-पत्नी के सम्बन्धों में तनाव के कारण सम्बंध-विच्छेद की स्थिति में भी बच्ची के लिए उद्वेलित अपार हृदय किस प्रकार हृदय को झकझोर देता है इसे राजेन्द्र यादव ने 'भविष्य के पास मंडराता अतीत' कहानी में दिखाया है। अत: नई कहानी में आज के युग बोध की अभिव्यक्ति तथा जीवन सत्य को आंतरिक जटिलता व संश्लिष्टता में पहचानने के साथ साथ शहर एवं ग्रामांचल को उनके यथार्थ परिप्रेक्ष्य में रूपायित करने का प्रयत्न दृष्टिगोचर होता है। खोखले आदर्शों एवं रूढ़ मान्यताओं की जगह नये मूल्यों की स्थापना का आग्रह भी स्पष्ट परिलक्षित होता है।[22] नयी कहानी का यह आन्दोलन सन् 1960 तक वैयक्तिक कुंठा, संत्रास की परिधि के भीतर ही सिमट कर रह गया और आन्दोलन के अन्तर्गत जिस कथ्य और शिल्प के साथ नये दृष्टिकोण की बात उठायी गयी थी वह आगे चलकर झूठी पड़ने लगी तथा कथा रूढ़ियाँ बनती गयीं।[23] फलस्वरूप नयी कहानी एक नये मोड़ के साथ साठोत्तर कहानी में पदार्पण करने लगी।

साठोत्तर कहानी :

साठोत्तर कहानी उपरिनिर्दिष्ट नये आयामों की विकासात्मक स्थिति की देन है, जो उसी धारा में कुछ अन्य नये आयामों को अपने में समेटे हुए दृष्टिगोचर होती है। 1960के पश्चात् कहानी में ऐसा मोड़ व चेतना सामने आयी है जो पूर्ववर्ती रचना पीढ़ी से कई अर्थों में भिन्न है।[24] सन् 1960 के

बाद की पीढ़ी उस स्पष्ट दृष्टि से अपने युग के यथार्थ को कहानी में प्रस्तुत करने को आतुर हुई जहाँ न कहानी बनाने का आग्रह है और न प्रतीकों का मोह ही है। इस समय अपने तथ्यों तथा सीधे भोगने व जीने वाले क्षणों के रूप में कहानी को प्रस्तुत कर देने का यथार्थपरक प्रयत्न होने लगा।[25] यह उल्लेखनीय है कि सन् साठ के पहले एक पीड़ा भरा प्रतीक्षा का युग था और बाद में आतंकपूर्ण एवं निराश जीवन का युग है। यही प्रवृत्ति कहानियों में पूर्ण रूप से मिलती है। इसी कारण इन कहानियों में नये मूल्यों व आयामों की प्रतिष्ठा तथा खोज के लिए प्रयत्न है। नयी पीढ़ी अपनी सच्चाई खोजती है जो वैयक्तिक स्तर पर ही उसे अनुभूत होती है। क्योंकि समाज मूल्यहीन होता जा रहा है। अत: आज वैयक्तिकता का राग ही मुख्य ध्येय हो रहा है। आज मूल्यों के सम्बंध में प्रतिक्षण धारणाएँ बदलती जा रही हैं। प्रत्येक आनेवाला नया क्षण नयी दिशा को उद्घाटित करना चाहता है। यही कारण है कि संपूर्ण साहित्य-विशेष रूप से कहानी साहित्य में एक सुस्पष्ट मोड़ आ गया है।[26] अत: तीव्र गति से बदलते हुए सामाजिक परिवेश से सम्बंधित कहानियों का परंपरागत शिल्प यहाँ आकर फिर टूटने लगा।

उपर्युक्त तथ्य को प्रभावी बनाने के लिए समय-समय पर अनेक गोष्ठियाँ आयोजित की गयीं।[27] एक गोष्ठी में 'हिन्दी कथा साहित्य उपलब्धियाँ' उभरती दिशाएँ और आधुनिकता' विषय पर विचार किया गया। इसमें देवीशंकर अवस्थी के विचार थे कि हिन्दी कहानी साहित्य में सन् 1960 के बाद नया मोड़ आया है क्योंकि इन दिनों कहानीकारों की एक ऐसी मिश्रित नयी पीढ़ी है जिसमें कुछ सन 1950 के पहले के कहानीकार हैं जो यथार्थोन्मुख आदर्श के सृजन पर बल देते हैं तथा कुछ सन 1950 के बाद के कहानीकार हैं

जिनके सृजन में यथार्थ की अभिव्यक्ति का सूक्ष्म प्रयत्न मिलता है। साथ ही तीसरे नयी पीढ़ी के कहानीकार हैं जो सन् 1960 के बाद की यथार्थवादी - प्रवृत्ति से पूर्ण रूप से संपृक्त हैं।[28]

यह उल्लेखनीय है कि सन् 1960 से पहले कहानीकार अपनी रचनाओं में सूक्ष्म प्रयत्नों द्वारा भावों व घटनाओं का संयोजन तो करते हुए दिखायी देते हैं परन्तु आधुनिकता का बोझ पूर्ण रूप से वहन नहीं कर पाते। बाद की कहानियों में जिस जीवन की अभिव्यक्ति है वह एक अतर्क जगत है जिसमें संवेदना का स्तर ही परिवर्तित हो चुका है। इस प्रकार सन् साठ के बाद कहानियों में चाहे कुंठा हो या संत्रास, आत्महत्या की भावना हो या लेखक की निजी स्वतंत्रता, प्रत्येक क्षण का वर्णन नितान्त मार्मिक व निजी ढंग से जीवन के नये आयामों को प्रदर्शित करता हुआ दृष्टिगोचर होता है।

उपर्युक्त आयामों के मध्य नयी कहानी के प्रति क्रियाशील एक नयी संचेतना ने आन्दोलन का रूप लिया जिसकी स्वस्थ वैचारिक भूमिका का प्रारंभ नवम्बर 1964 में प्रकाशित 'आधार' के सचेतन कहानी विशेषांक से माना जा सकता है। इसमें सचेतन कहानी को भाव-बोध सहित अधिक सक्रिय तथा जीवन की स्वीकृति की कहानी माना गया है। इस सन्दर्भ में भी अनेक गोष्ठियाँ हुई, जिनमें 'रचना' (बम्बई) व 'मनीषा' (दिल्ली) गोष्ठी विशेष उल्लेखनीय हैं। फलस्वरूप सचेतन कहानी आन्दोलन प्रारम्भ हो गया।

<u>सचेतन कहानी :</u>

सचेतन कहानी आन्दोलन के प्रवर्तक डॉ० महीप सिंह माने जाते हैं। उन्हीं

से प्राप्त जानकारी के अनुसार- सचेतन दृष्टि में नैराश्य अनास्था तथा बौद्धिक तटस्थता का प्रत्याख्यान कर जीवन को गतिशीलता से जिया जाता है। इस प्रकार सचेतना एक ऐसी दृष्टि मानी जा सकती है जिसमें जीवन जिया भी जाता है और जाना भी जाता है।[29] जीवन से आत्यंतिक संपृक्ति ही इस दृष्टि की सबसे बड़ी विशेषता है। इसलिए सचेतनता जीवन से भागने में नहीं, जीवन के अन्त: प्रवेश में निहित है। वास्तव में सचेतन परिवेशगत यथार्थ के प्रति और जीवन के प्रति एक विशेष दृष्टि का बोध है। इसके प्रकाश में ही आज के मनुष्य को सर्वांग संपूर्णता के साथ उसके अचेतन ही नहीं, अवचेतन अस्तित्व को सचेतन रूप में देखा जा सकता है।[30]

सचेतन दृष्टि की अनिवार्यता तथा औचित्य के सन्दर्भ में डॉ0 महीप सिंह का कहना है- साहित्य के सन्दर्भ में हम विचार ग्रहण तो करते रहे हैं परन्तु विचार की भूमिका को साहित्यिक सन्दर्भ में कभी विशेष महत्वपूर्ण नहीं माना गया। इस सन्दर्भ में सदैव अधिक बल साहित्य की भावनात्मक प्रवृत्ति को ही दिया जा रहा है। परन्तु आज के साहित्यकारों ने इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि विचार के अभाव में कोई भी लेखक वैज्ञानिक जीवन दृष्टि का निर्माण नहीं कर सकता और एक वैज्ञानिक जीवन दृष्टि के अभाव में साहित्य कुछ एक संवेगों और भावना-प्रसूत उच्छ्वासों की तात्कालिक अभिव्यक्ति भर बन कर रह जाता है।[31] सचेतन दृष्टि से सम्पन्न लेखकों का विश्वास है कि नये मूल्यों की स्थापना के लिये किये जाने वाले प्रत्येक संघर्ष में जीवन की वास्तविकता निहित है, वह कभी निष्क्रिय नहीं हो सकता। इस दृष्टि के साथ चलने वाले कहानीकारों की प्रमुख कहानियों के रूप में डॉ0 महीप सिंह की 'सुबह के फूल', 'काला-बाप-गोरा बाप',

'उजाले के उल्लू', 'कील', 'गन्ध', 'घिराव', 'सीधी रेखाओं के वृत्त' तथा मनहर चौहान की 'क्योंकि', 'घर-घुसरो', 'अध्यापिका का पति', साथ ही 'लापता' (कृष्ण बलदेव वैद), 'फ्रीजर में लौ सम्बन्ध' (कुलदीप बग्गा) 'स्पीड ब्रेकर' (कुसुम अंसल), 'वृत्त-नायक' (धर्मेन्द्र गुप्त), 'मफरूर' (देवेन्द्र इस्सर), 'अर्द्ध विराम' (नफीस आफरीदी), 'स्वप्नदंश' (मणिका मोहिनी), 'एक झुका हुआ आदमी' (मंजुल भगत), 'वर्फ' (वेदराही), 'अपने- अपने कारावास' (सरोज वशिष्ठ), 'कमरे में बन्द आभास' (सिम्मी हर्षिता), 'परदेश' (सुनीता जैन), 'आदमी : जमाने का' (हिमांशु जोशी), 'छिटकी हुई जिन्दगी' (ममता अग्रवाल), 'ढलान' (कमल जोशी), 'आइसक्रीम वाला लड़का' (हृदयेश) आदि कहानियों का नाम लिया जा सकता है। अपनी बात को अभिव्यक्ति का रूप देने के लिए इस धारा के सामने विषय या शिल्प की कोई सीमा या बाध्यता नहीं थी। इसमें आज के मशीनीकरण में जीने वाले लोग हैं। योगेश गुप्त की अधिकांश कहानियों में युद्ध सन्दर्भ की मानवीय चेतना है तथा वेदराही की 'दरार' में हमारी आज की शिक्षा पद्धति पर तीखा व्यंग्य है। अतः स्पष्ट है कि सूक्ष्म सांकेतिक प्रतीकों के नाम पर चली साठोत्तर कहानी की विकास धारा सचेतन कहानी में परिवर्तित होती गयी जिसमें कहानी सचेतनता का रूप लेती गयी। इस सचेतनता में जीवन की अभिव्यक्ति के किसी भी प्रकार के मताग्रह को स्थान नहीं है।

सचेतन कहानी आन्दोलन का प्रेरणास्रोत अमरीकी (हेमिंग्वे जैसे) लेखकों में माना जा सकता है। इन्होंने मनुष्य के समग्र अहम् को स्थापित करते हुए जीवन को स्वीकारा है। इसमें एक ओर जीवन के तनावों का चित्रण है तो दूसरी ओर संघर्ष के लिए समर्पित और प्रतिबद्ध पीढ़ी भी, इस कथा सृष्टि में

पूरे वर्चस्व के साथ उपस्थित है। इस विचारधारा ने अस्तित्ववादी दर्शन का विरोध करके मनुष्य की नयी सार्थकता को खोजा है।[32] यही कारण है कि इस आन्दोलन का स्वागत हुआ जबकि परवर्ती अकहानी आन्दोलन ऐसा सशक्त न बन सका।

अकहानी :

सचेतन कहानी के बाद 'अकहानी' आन्दोलन का नाम सुनायी पड़ता है परन्तु इस आन्दोलन को अधिक सफलता न मिल सकी क्योंकि 'अकहानी' (Anti story) अकथात्मक (Plot less story) कहानी नहीं होती। उसमें कथावस्तु किसी न किसी रूप में अवश्य ही विद्यमान रहती है। पूर्वदृश्य कथा (Flesh Back story) में भी कथावस्तु रहती ही है। अकहानी के सन्दर्भ में डॉ0 नामवर सिंह का विचार है- 'यह आकस्मिक नहीं है कि हिन्दी कहानी में 1958-60 के आसपास कहानीकारों की जो नई पीढ़ी उभर कर सामने आयी है वह अपनी शुरुआत का नाता निर्मल वर्मा की 'एक शुरुआत' से जोड़ना पसंद करती है। मोहनराकेश, राजेन्द्रयादव, तथा कमलेश्वर द्वारा विज्ञापित नई कहानी के विरुद्ध इस पीढ़ी के मन में कितना अधिक विद्रोह है यह इसी से स्पष्ट है कि उन्होंने कहानी मात्र को अस्वीकार करके हिन्दी में अकहानी की आवाज उठायी।[33] डॉ0 विमल के अनुसार अकहानी सचेतन की प्रक्रिया न होकर अचेतन की प्रक्रिया मानी जा सकती है जिसमें न कहानी के संकेतों और प्रतीकों के प्रति आग्रह है और न ही सचेतन कहानी की सक्रिय आस्था है। अत: अकहानी, कहानी की धारणागत प्रतीति से पृथक एक अस्थापित कथा धारा है, जो कहानी के सभी वर्गीकरणों, मूल्यांकन, आधारों और पूर्व समीक्षाओं को अस्वीकार करती है।[34]

किया है । [42] वातावरण के माध्यम से बच्चे की संवेदनशून्य तथा आश्चर्यचकित करने वाली मन:स्थिति का सहज वर्णन है । विकास की दृष्टि से इस समय कहानी घोर कथात्मकता के स्थान पर अकथात्मक क्षणों की मन: म स्थितियों पर अधिक आधारित हो गयी । ऐसी कहानियों में 'घर', 'आदमी' (आशीष सिन्हा), 'नरक-कुंड की मछली' (अजित पुष्कल), 'दर्द की मछली' (ओम गोस्वामी), 'यह सब अन्तहीन' (प्रभु जोशी), 'कीर्तन' (मधुकर सिंह) आदि कहानियों के नाम भी उल्लेखनीय हैं ।

परिस्थितियों के अनुकूल अनेक समानान्तर कहानियों का नायक परि-स्थितियों से अभिभूत होकर कहीं सड़क पर खड़ा भीख माँगता है तो कहीं फैक्टरी में अपने अधिकार के लिए लड़ता है । कहीं पूँजीवादियों के धोखे में आकर एक ओर अपने खेत का अंतिम टुकड़ा भी बेच देता है तो दूसरी ओर अपना काम निकालने व पदोन्नति जैसे स्वार्थ से अपनी पत्नी को कालगर्ल के रूप में अफसर के सम्मुख रख देता है । अत: जीवनकी समस्त सुविधा- असुविधा उसके वश में है । फिर भी वह अपमानित होकर असहायता की स्थिति में जीवन यापन करने के लिए विवश रहता है । [43] इस सन्दर्भ में 'बयान' (कमलेश्वर), 'आतंक भरा सुख' (मेहरुन्निसा परवेज), 'कितना पानी--' (सुदीप), 'दमनचक्र' (सुधा अरोड़ा), 'दरारों के बीच' (से0 रा0 यात्री), 'मनुष्य चिन्ह' (हिमांशु जोशी), 'प्रतिद्वन्द्वी' (स्वदेश दीपक) आदि कहानियां उल्लेखनीय हैं । इन दिनों की अधिकांश कहानियाँ नगरबोध जीवन की है फिर भी ग्राम जीवन से सम्बंधित कुछ कहानियाँ आलोच्य काल में मिलती हैं। इनमें से प्रमुख कहानियों का उल्लेख करना यहाँ अभीष्ट है । इन्हें समकालीन ग्रामीण कहानी नाम देना उपयुक्त ही होगा ।

समकालीन ग्रामीण कहानी :

ग्रामीण परिवेश से सम्बंधित कुछ कहानियाँ किसी अंचल विशेष के रीति-रिवाजों का चित्र अंकित करती हैं। कुछ कहानियों का परिवेश पहाड़ी क्षेत्र है तो कुछ अपेक्षाकृत पिछड़े ग्राम जीवन से सम्बंधित हैं। इसी कारण इनमें कहीं नगर बोध का विशिष्ट अहं अधिक सशक्त होता है तो कहीं ग्रामीण जीवन। एक ओर नगर जीवन अपने नयेपन व आधुनिकता की ललक में टूट रहा है तो दूसरी ओर गाँव में पुरानेपन की मार्मिक पीड़ा का वर्णन है। 'क्लेड' (जितेन्द्र भाटिया), 'संतप्त लोक' (गोपाल उपाध्याय), तथा 'वापसी सूरज की' (अभिमन्यु अनन्त) कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। कुछ कहानियों में दिखाया गया है कि गाँव से महानगर में आये व्यक्ति को महानगर एक ऐसा यंत्र मात्र लगता है, जिसमें व्यक्ति निरन्तर कार्य करते हुए पुर्जे बन कर रह जाते हैं और वह ऐसे नगरीय परिवेश से समायोजन स्थापित नहीं कर पाता। 'बेकार' (रामजी मिश्र), 'वशीकरण' (मधुकर सिंह) इसी स्थिति की द्योतक कहानियाँ हैं तो दूसरी ओर नगर से गाँव में आये व्यक्ति को ग्रामजीवन से सामंजस्य स्थापित करना भी प्राय: कठिन होता है। 'तनहाई' (बल्लभ सिद्धार्थ), 'कुम्हड़े की सब्जी' (सुबोध कुमार श्रीवास्तव), 'सामना' (ओमप्रकाश दीपक), 'भूख' (जितेन्द्र कुमार मित्तल) इसी प्रकार की कहानियाँ हैं। समकालीन ग्रामीण कहानियों में रामदरश मिश्र की कहानियाँ भी विशेष उल्लेखनीय हैं। इन्होंने छुट्टियाँ ग्रामीण परिवेश में व्यतीत की हैं। 'खंडहर की आवाज', 'माँ, सन्नाटा', और बजता हुआ रेडियो', तथा 'छूटता हुआ नगर' इस दृष्टि से उत्कृष्ट कहानियाँ हैं। एक ओर इसी लेखक की 'खाली घर', 'मंगलयात्रा', 'एक और यात्रा', 'एक औरत : एक जिन्दगी' आदि कहानियाँ सघन आधुनिक संवेदनाओं

से सम्पृक्त है तो दूसरी ओर सेक्स व रोमांस की टक्कर तथा महानगरीय संस्कृति के बौद्धिक परिवेश की स्थिति का द्योतन करती हुई 'पुष्पहार' (शिवानी), 'एक यात्रा सतह के नीचे' (शिवप्रसाद सिंह) 'रक्तपात' (दूधनाथ सिंह) आदि कहानियाँ हैं ।

इसके साथ-साथ 'अतिथि सत्कार', 'हाथ का जस और बात का सत्त' (फणीश्वरनाथ रेणु), 'परती और परदेशी' (हिमांशु श्रीवास्तव), 'खुली खिड़की' 'अमर बेल' (राजेन्द्र अवस्थी), 'बोलने वाले जानवर' (ज्ञानी), 'वापसी' (शैलेश मटियानी) आदि कहानियाँ भी इसी कोटि की कही जा सकती हैं । उपर्युक्त स्थितियों तथा कहानियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि परिस्थितियों के मध्य विवश हुए व्यक्ति के आचार- व्यवहार, जीवन मूल्यों व आयामों में परिवर्तन आता रहा है । यही परिवर्तन कहानियों में स्पष्ट रूप से बदलते हुए शिल्प-समायोजन के साथ रूपायित हुआ है ।

अत: सन् साठ के बाद की कहानियों के विषय में कहा जा सकता है कि नये कथ्य, नये प्रयोग तथा नव-नव जीवन मूल्यों द्वारा साठोत्तरी कहानी ने हिन्दी कथा साहित्य को नयी अर्थवत्ता तथा कला संचेतना प्रदान की है । ऐसी कहानियाँ अपनी पूर्ववर्ती कहानियों से एकदम भिन्न लगती हैं तथा एक ऐसी कथाधारा का रूप लेती जा रही हैं जो पुराने समस्त बन्धन, मूल्यांकन, आधार तथा समीक्षाओं को एक ओर छोड़ चुकी हैं। इससे प्रतीत होता है कि सन् 1960 के बाद का अधिकांश लेखन एक सीमा तक 'शहरी साहित्य', या 'टी हाउस' तक का साहित्य होकर रह गया है ।[44] इनमें परिवर्तित जीवन दृष्टि व पारिवारिक जीवन के नये आयामों को विशेष रूप से प्रस्तुत किया गया है । साठोत्तरी कहानियों में अधिकांश लेखन बदलते हुए प्रेम तथा काम सम्बंधों पर भी आधारित है।

------ जिन पर विस्तृत विवेचन यथाप्रसंग परवर्ती अध्यायों में किया जायेगा। इस प्रकार की कहानियों में 'यह भी कोई गीत है', 'देह की सीता', 'मोह', 'आत्मघात', 'आधार' (दीप्ति खंडेलवाल), 'आहटें' (मृणाल पांडे), 'कितनी - कैदें' (मृदुला गर्ग), 'नारी नहीं नारी का विज्ञापन' (मन्नू भंडारी), 'मोहबन्ध', 'कोई नहीं ---', 'कितना बड़ा झूठ' (उषा प्रियंवदा) 'छोटे घेरे का विद्रोह' (शानी), 'अपत्नी' (ममता कालिया) आदि कहानियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं। एक ओर जीवन के आयाम बदल रहे हैं तो दूसरी ओर पारिवारिक सम्बंध बदल रहे हैं इससे कहीं परिवारों में विघटन होता है तो कहीं नारी-पुरुष का अहं, वैयक्तिकता प्रधान होकर पारिवारिक जीवन को अस्तव्यस्त कर देता है। इन स्थितियों का द्योतन करती हुई कहानियों में 'शेष होते हुए', 'पिता', 'सम्बंध', 'फेंस के इधर और उधर' (ज्ञानरंजन), 'वेतन के पैसे', ('सन्नाटा', 'कटाव', 'गन्ध' (महीप सिंह) 'एक नाव के यात्री' (शानी), 'दायरा' (रामकुमार) 'क्वार्टर', 'सुहागिनें', 'एक और जिन्दगी' (मोहन राकेश), 'टूटना', 'किनारे से किनारे तक', 'भविष्य के पास मंडराता अतीत', 'बिरादरी बाहर', (राजेन्द्र यादव), 'तट से छूटे हुए' (सुरेश सिन्हा), 'त्रिशंकु', 'यही सच है', 'तीसरा आदमी' (मन्नू भंडारी), 'रबर बैन्ड' (अन्विता अग्रवाल) आदि का नाम उल्लेखनीय हैं। इनका विस्तृत विवेचन परवर्ती अध्यायों में किया जायेगा।

मूल्यांकन :

पूर्ववर्ती पृष्ठों में हिन्दी कहानी की विकास यात्रा का जो विवेचन प्रस्तुत किया गया है उसके निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि सन् साठ के बाद प्रत्येक स्थिति में लेखक की यथार्थ के प्रति सजगता तथा उसकी अभिव्यक्ति एवं विश्लेषण में नवीनता के आग्रह के कारण वस्तु और शिल्प दोनों में परिवर्तन

आया है। साथ ही नये आन्दोलनों और नारे बाजी मे भी कुछ नया दिखाने की चेष्टा में इन दोनों पक्षों को प्रभावित किया है। इस तथ्य के अतिरिक्त विज्ञान ने हमें एक ऐसी चिन्तन प्रणाली तथा दिशादृष्टि प्रदान की है, जिसके द्वारा हम छोटे-छोटे संकेतों के सहारे उस घिरे हुए संघर्ष को समझ सकें और व्यक्तित्व के उलझे हुए सूत्रों को सुलझा सकें। आज का कहानीकार गहराई में जाकर सत्य की उस गूंज तक पहुँचना चाहता है जो पाठक के जीवन को भी निरन्तर स्पर्श करती रहती है। कोरी तर्कसंगत या विषयगत पूर्वापरता का स्थान एक अभ्यन्तर यथार्थता ले रही है जो जीवन के गहनतम स्तर की सच्चाई को प्राप्त कर सके। इस प्रकार मनोविज्ञान से हमें गहरी दृष्टि प्राप्त हुई है, जिससे कहानी पूर्ण लाभान्वित होकर कौतूहल प्रधान तथा शिल्प की दृष्टि से नितान्त भिन्न हो गयी है।

तीसरा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि साठोत्तरी कहानी के वस्तु-विन्यास में नवीन कौशल दृष्टिगोचर होता है, जिसमें लेखक की बुद्धि की पटुता की अपेक्षा होती है। अनेक कहानियों में एक कहानी में ही दूसरी कहानी का जन्म होता है जिससे संवेदनशीलता विशेष रूप से उभर कर आती है। ऐसे वस्तु विन्यास का अनुसरण करने वाले लेखक में नूतन विधान तथा चमत्कार प्रियता का समावेश होता है।

चतुर्थत: इनमें प्राय: किसी एक बिन्दु को कहानी का विषय बनाया जाता है जिससे घटनाओं की संख्या अल्प हो जाती है। इसके अतिरिक्त आधुनिक कहानियों में जो परिवर्तन हुए हैं उन्हें संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

UNIVERSITY LIBRARY
M. S. UNIVERSITY OF BARODA

1- जीवन के गहन गम्भीर चिन्तन के चित्रण से कहानी जटिल एवं दुरूह तथा रहस्यमय बन गयी है उसमें उपदेश, नीतिवचन, सूक्तिवाक्य के स्थान पर सांकेतिकता का महत्व बढ़ गया है। अनेक कहानियों का आरंभ आज वहाँ से होता है जहाँ पहले समाप्त होती थी साथ ही विचार व भाषा की दृष्टि से भी कहानी पुरानी कहानी से नितान्त भिन्न कही जा सकती है।

2- आज का कहानीकार जीवन को समस्त सन्दर्भों से पृथक कर केवल वर्तमान का सूक्ष्म विश्लेषण करना चाहता है। नितान्त वर्तमान शब्द भी विशाल है। अत: वह क्षण के निकष पर कहानी लिखता है जिससे कहानी में सूक्ष्म अभिव्यंजनाओं और बौद्धिकता के दर्शन पूर्ण रूप से होते हैं। जीवन के लघु प्रसंग, मूड, विचार के सजीव चित्रण में कथा का ह्रास होता है जिससे आज की कहानी में घटना संघटन का तत्व विघटित हो गया है। इस प्रकार के कथानक में कभी- कभी लेखक इतना अन्तर्मुखी हो जाता है कि आदि से अन्त तक एक विचार से दूसरा विचार उत्पन्न होता रहता है और एक कहानी में ही दूसरी कहानियों का जन्म होता रहता है।

3- आज की कहानियों का कथ्य केवल एक बिन्दु मात्र अनुभूति का क्षण है जो विशिष्ट मन:स्थिति का आभास देता है। अत: यह समष्टि से अधिक व्यष्टि चेतना पर आधारित रहती है।

पूर्ववर्ती विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कहानी का रूप दिन-प्रतिदिन परिवर्तित होता जा रहा है, जिसका मुख्य कारण व्यक्ति, समाज, परिवार का विभिन्न स्थितियों से प्रभावित होना माना जा सकता है। साहित्य मानव का दर्पण मात्र कहा जा सकता है। अत: परिवार किस प्रकार परिस्थितियों

के अनुरूप प्रभावित होते हैं। दूसरे शब्दों में परिवार को प्रभावित करने में कौन-कौन से पक्ष सहायक होते हैं पर विचार करेंगे जो आले अध्याय का विषय है।

--

सन्दर्भ -संकेत :

1- प्रेमचन्द- कुछ विचार- पृष्ठ-53
2- उपरिवत्- पृष्ठ-53
3- डॉ0 देवेश ठाकुर- हिन्दी की पहली कहानी- पृष्ठ-17
4- डॉ0 गोपाल राय- शीर्षक- हिन्दी की पहली कहानी समीक्षा पत्रिका, अंक-जुलाई-अगस्त 1976 पृष्ठ-66
5- रामचन्द्र शुक्ल- हिन्दी साहित्य का इतिहास-पृष्ठ
6- लक्ष्मीनारायण लाल- हिन्दी कहानियों में शिल्प विधि का विकास- पृष्ठ-53
7- श्री राजेन्द्र यादव- कहानी स्वरूप और संवेदना- पृष्ठ-11
8- डॉ0 देवेश ठाकुर-हिन्दी की पहली कहानी- पृष्ठ-17
9- डॉ0 रामदरश मिश्र- शीर्षक- हिन्दी कहानी की पूर्व पीठिका और प्रस्थान बिन्दु- संचेतना पत्रिका, सितम्बर-दिसम्बर-1969-पृष्ठ-20
10- उपरिवत-पृष्ठ-20
11- लक्ष्मीनारायण लाल-हिन्दी कहानियों में शिल्प विधि का विकास- पृष्ठ-249
12- द्रष्टव्य- आलोचना : स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य विशेषांक- भाग-2, पृष्ठ-59
13- नयी कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति-सं0 देवीशंकर अवस्थी ।
14- 'नयी कहानी का अस्तित्व मेरी समझ में नहीं आ रहा है-'मनीषा' कथा गोष्ठी- नवभारत टाइम्स, 1 अप्रेल,सन् 1964
15- उपेन्द्रनाथ अश्क- हिंदी कहानियाँ और फैशन ।

16- डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय- आधुनिक कहानी का परिपार्श्व (भूमिका)

17- क- कमलेश्वर- नयी कहानी की भूमिका- पृष्ठ-33, 52, 83, 92, 106

ख- राजेन्द्र यादव- कहानी : स्वरूप और संवेदना पृष्ठ-45

ग- बच्चन सिंह- 'परम्परा का नया मोड़ : रोमांटिक यथार्थ'-नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति- सं0 डा0 देवीशंकर अवस्थी- पृष्ठ-219

घ- डॉ0 नामवर सिंह का वक्तव्य- 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी गोष्ठी' - बंबई-24 मार्च 1968 (रिपोर्टिंग-धर्मयुग-4 अप्रैल-1968)

18- डॉ0 देवीशंकर अवस्थी- नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति- भूमिका ।

19- डॉ0 देवेश ठाकुर- कथाक्रम- भाग-2, पृष्ठ-10

20- राजेन्द्र यादव- कहानी स्वरूप और संवेदना- पृष्ठ-44

21- मोहन राकेश- लेख- 'नयी संभावनाओं की खोज' सारिका पत्रिका-1964

22- डॉ0 शिवशंकर पांडेय- स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प- पृष्ठ-66

23- डॉ0 नरेन्द्र मोहन- आधुनिकता और समकालीन रचना संदर्भ- पृष्ठ-80

24- गंगाप्रसाद विमल- समकालीन कहानी का रचना संसार- पृष्ठ-61

25- सकलदीप सिंह- नवलेखन और मूल्यबद्धता- कल्पना-जनवरी-1966-पृष्ठ-63-67

26- राजेन्द्र यादव- कहानी स्वरूप और संवेदना- पृष्ठ-100

27- कुछ चर्चित गोष्ठियाँ-

क) नवलेखन विमर्श गोष्ठी- वाराणसी-27-28 मार्च-1968

ख) कथा सम्मेलन नागपुर-रिपोर्ट- धर्मयुग 9 जून 1963

ग) हिंदी साहित्य सभा- श्री राम कालेज-दिल्ली सर्द दिसंबर 1965

घ) स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी गोष्ठी-लोकभारती बंबई-24 मार्च 1968

28- देवीशंकर अवस्थी- 25 दिसम्बर 1965 की कथा गोष्ठी-रिपोर्ट-
कल्पना पत्रिका- अप्रेल-66, शीर्षक- कथा समारोह: तीन दिनों की
एक डायरी- सं0 शिवप्रसाद सिंह।

29- व्यक्तिगत भेंट वार्ता- 21 सितम्बर-1982

30- डॉ0 शिवशंकर पांडेय-स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी कथ्य और शिल्प-
पृष्ठ-67

31- डॉ0 महीपसिंह-हिंदी कहानी पहचान और परख,सं0डा0 इन्द्रनाथ
मदान- पृष्ठ-88

32- डॉ0 चन्द्रभान रावत व डा0 रामकुमार खंडेलवाल-हिंदी कहानी :
फिलहाल- पृष्ठ-30

33- डॉ0 नामवर सिंह- कहानी : नयी कहानी- पृष्ठ-237

34- गंगाप्रसाद विमल- समकालीन कहानी का रचना संसार-पृष्ठ-65

35- डॉ0 सूर्य प्रसाद दीक्षित- नयी कहानी, अकहानी, और सचेतन
कहानी- सचेतना पत्रिका- मार्च-1970,पृष्ठ-205

36- डॉ0 नरेन्द्र मोहन- समकालीन कहानी की पहचान- पृष्ठ-7

37- द्रष्टव्य- सारिका पत्रिका- अक्टूबर-1974

38- विश्वनाथप्रसाद तिवारी- शीर्षक- सन् 1972 की कहानी- समीक्षा
पत्रिका- मई 1973 पृष्ठ-16

39- कमलेश्वर- सारिका पत्रिका- फरवरी 1975

40- डॉ0 विनय-शीर्षक- 'समय की भयावहता और समकालीन कहानी'-
समकालीन कहानी : समानान्तर कहानी- पृष्ठ-63

41- उपरिवत्-पृष्ठ-63

42- सूर्यनारायण मा0 रणसुभे-कहानीकार कमलेश्वर: सन्दर्भ और प्रकृति,पृ0113

43- उपरिवत-पृष्ठ-67

44- 'चोरी बनाम अश्लीलता---- बनाम हिंदी कहानी' कल्पना पत्रिका-
अगस्त 1966, पृष्ठ-37

--